बी.आर. अम्बेडकर का जीवन चित्रण एवं जाति व्यवस्था पर विचार

डॉ. परमानन्द चौधरी*

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891ई. को महाराष्ट्र के 'महो' नामक स्थान में हुआ था। वे महार जाति के एक अत्यन्त गरीब परिवार में जन्मे थे। महार जाति महाराष्ट्र में अछूत समझी जाती थी। जन्म के समय उनका नाम भीम सकलपाल था। जिस समय भीमराव अम्बेडकर का जन्म हुआ था उस समय निम्न जाति के लोगों को घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। उन्हें अपने विद्यार्थी जीवन तथा जीवन के प्रारम्भिक काल में निम्न जाति में उत्पन्न होने के कारण अनेक बार अपमान सहना पड़ा जिसने उनके भविष्य की रूपरेखा तैयार कर दी तथा उन्होंने अपना जीवन दलित वर्ग के उत्थान के लिए समर्पित कर दिया। अम्बेडकर बचपन से ही बहुत परिश्रमी, संयमी और धर्मनिष्ठ थे। उन्होंने 1907 में High School की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके पश्चात् उन्हें बड़ौदा के महाराजा ने छात्रवृत्ति प्रदान की जिसके सहारे उन्होंने भ्पहीमत म्कनबंजपवद प्राप्त की और 1912 में B.A. पास कर लिया। 1913 में बड़ौदा के महाराजा की छात्रवृत्ति पर ही अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय में अध्ययन के लिए गए। वहाँ 1915 में उन्होंने अर्थशास्त्र विषय में M.A. की परीक्षा उत्तीर्ण की। वहीं वे विश्वविख्यात अर्थशास्त्री प्रो. सैल्गमैन के निकट सम्पर्क में आए। 1916 में उन्होंने विश्व की प्रसिद्ध शिक्षण संस्था London School of Economics and Political Science में प्रवेश लिया। अगस्त, 1917 में वे भारत लौट आए और महाराजा बड़ौदा के 'सैनिक सचिव' के रूप में उनकी नियुक्ति हुई। बड़ौदा राज्य में उच्च पद पर होने के बावजूद भी उनके साथ अच्छा नहीं होता था क्योंकि वे अछूत थे चपरासी भी उनका अपमान करते थे। 1920 में वे पुनः अध्ययन के लिए लंदन गए और 1924 में उन्होंने Master of Science की उपाधि प्राप्त की। अपने शोध–प्रबंध पर उन्होंने लंदन विश्वविद्यालय से Ph.D. की उपाधि प्राप्त की। इसके साथ ही उन्होंने ठंत ।बज सूं की उपाधि भी प्राप्त की।

1923 में वे भारत लौट आए और बम्बई में उन्होंने वकालत प्रारम्भ की तथा उन्होंने बहिष्कृत भारत नामक मराठी पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ किया।

*सहायक शिक्षक, टी.के.घोष अकादमी, राजकीय उच्च विश्द्यालय, पटना – 04

1927 में ही उन्हें बम्बई विधान परिषद का सदस्य मनोनीत किया गया। विधान परिषद में उन्होंने दलित समाज की स्थिति का बहुत मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया। सामाजिक अछूतोद्धार कार्यक्रम के अन्तर्गत उन्होंने 'बहिष्कृत अधिकारी सभा' की स्थापना की। 1936 ई. में उन्होंने प्दकमचमदकमदज स्ंइवनत च्तजल की स्थापना की। अगस्त 1942 में उन्हें गवर्नर जनरल की परिषद का सदस्य मनोनीत किया गया। 1947 में उन्हें संविधान निर्माण की प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाया गया। 1949 में उन्हें स्वतंत्र भारत का प्रथम 'विधि मंत्री' बनाया गया किन्तु उन्होंने पारस्परिक मतभेदों के कारण 1951 में मंत्री पद से त्याग पत्र दे दिया। 1955 में उन्होंने भारतीय बुद्ध महासभा की स्थापना की और 14 अक्टूबर 1956 को उन्होंने 'बुद्धधर्म' स्वीकार कर लिया। 6 दिसम्बर, 1956 को उनका निधन हो गया।

डॉ0 अम्बेदकर भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के नेता और समाज सुधारक थे। वे जीवन भर दलित–उत्थान के लिए प्रयासरत रहे। स्वातन्त्रयोत्तर भारत की सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्था डॉ0 अम्बेदकर के विचारों से काफी प्रभावित है। उनके विचारों की स्पष्ट छाप भारतीय संविधान में दिखाई देती है। भारतीय समाज की जाति–संरचना के विषय में उनके विचार उनकी अनेक पुस्तकों में मिलते हैं। ये पुस्तकें हैं– The Untouchables, Who are They, Who are the Shudra, What Congress and Gandhi have done to the Untouchables, Emancipation of the Untouchables, Annihilation of Caste, आदि। वे दलितोद्धार की भावना से सार्वजनिक जीवन और राजनीति में आये। उनके मत में उच्च हिन्दू जातियों के प्रति गहरा आक्रोश था क्योंकि उन्हें अपने जीवन में पग–पग पर भारी अपमान एवं यन्त्रणापूर्ण स्थितियों का सामना इन उच्च जातियों की ओर से करना पड़ा था। उन्होंने दलितों एवं अछूतों की सामाजिक स्थिति को सुधारने के लिए अनेक दशकों तक अहिंसक लड़ाई का नेतृत्व किया। वे उस समय ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज, महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानन्द द्वारा अछूतोद्धार के लिए किये जाने वाले प्रयास को अपर्याप्त मानते थे। उनके अनुसार दलितों की पीड़ा केवल वही समझ सकता है जिसने स्वयं इस पीड़ा का अनुभव किया हो। वे स्पष्ट कहते हैं कि 'उन व्यक्तियों तथा संस्थाओं को अछूतों की बात कहने का हक नहीं है जो स्वयं अछूत नहीं हैं।'

डॉ0 अम्बेदकर ने जाति–प्रथा और हिन्दू समाज के परम्परागत विधान पर कठोर प्रहार किया। डॉ0 अम्बेदकर ने हिन्दू समाज की जाति–प्रथा पर जैसा कठोर प्रहार किया वैसा उनके पूर्व किसी समाज सुधारक एवं विचारक ने नहीं किया था। उनके पूर्ववर्ती या समकालीन अन्य दतिलोद्वारक केवल उच्च जातियों के जातीय अहंकार और विभिन्न जातियों के बीच ऊँच–नीच की भावना का विरोध करते थे,

लेकिन वे भारतीय समाज की वर्णव्यवस्था एवं जाति व्यवस्था को बनाए रखना चाहते थे। जो विचारक एवं समुदाय जाति व्यवस्था का विरोध भी करते थे, उनके विरोध का स्वर अत्यन्त नरम था। डॉ0 अम्बेदकर कहते थे कि यह चातुर्वर्ण्यव्यवस्था ही है जिसने हिन्दू समाज व्यवस्था में जाति व्यवथा एवं अस्पृश्यता को जन्म दिया है।

डॉ0 अम्बेदकर जाति–प्रथा को हिन्दू समाज का कोढ़ मानते थे। उनके अनुसार जाति–प्रथा कोई स्वाभाविक संस्था नहीं है, यह कृत्रिम है और विकास का परिणाम है। उनका मत है कि हिन्दू समाज में प्रारंभ में जाति–प्रथा नहीं थी। समाज में उच्च स्तर पर स्थित कुछ स्वार्थी लोगों ने कमजोर लोगों से उनकी इच्छा के विरूद्ध जबरन काम कराना प्रारम्भ किया। उन्होंने इन कमजोर लोगों को शिक्षा, व्यापार, हथियार रखने आदि के अधिकारों से वंचित करके उनकी दासता और पराधीनता को शाश्वत करने का प्रयास किया। इस प्रक्रिया में जाति–व्यवस्था अस्तित्व में आयी और क्रमशः कठोर होती गयी। इसमें ऊँच–नीच की उग्र भावना पनपती गयी। इसने तथाकथित अस्पृश्य जातियों के स्वाभिमान एवं आत्मसम्मान को प्रभावित करके उनकी दासता को सार्वकालिक एवं स्थायी बना दिया। उनके अनुसार यह जाति–प्रथा हिन्दू समाज के लिए प्रत्येक दृष्टि से हानिकारक सिद्ध हुई। इससे समाज की कार्यक्षमता एवं दक्षता प्रभावित हुई और लोगों को स्वैच्छिक रोजगार से मरहूम होना पड़ा।

उन्होंने मनुस्मृति में जातिव्यवस्था एवं एतज्जन्य अन्याय एवं अत्याचार की जड़ों को खोजा। उन्होंने विरोध स्वरूप मनुस्मृति को जलाया क्योंकि उनकी दृष्टि में मनुस्मृति हिन्दू समाज की सभी बुराइयों की जड़ है। उन्होंने उसे अन्याय एवं दमन पर आधारित हिन्दू सामाजिक व्यवस्था का प्रतीक माना। उनका मत है कि मनुस्मृति ने अछूतों का सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनीतिक शोषण करके उन्हें दासों की स्थिति में पहुंचाया। चूँकि वे जाति–प्रथा के मूल पर प्रहार करना चाहते थे, अतः उन्होंने सुझाव दिया कि मन्दिरों में पुजारी–पद पर जाति विशेष का एकाधिकार समाप्त होना चाहिए। वे जातिव्यवस्था को समूल नष्ट करना चाहते थे। वे एतत्हेतु मानते थे कि केवल अन्तर्जातीय विवाह ही इसे समूल नष्ट कर सकती है, न कि सहभोज। उनकी दृष्टि में खून का मिलन ही विभिन्न जातियों की दीवार को तोड़कर उनमें अपनापन ला सकता है।

उन्होंने दलितों के लिए सार्वजनिक स्थलों को खोलने पर बल दिया और इसकी स्पष्ट झलक संविधान के अनुच्छेदों 14, 15, 16 एवं 17 में मिलती है। यदि आज मंदिरों, कुओं, तालाबों समेत सभी सार्वजनिक स्थलों के उपभोग का अधिकार दलितों को मिला है तो उसका बड़ा श्रेय डॉ0 अम्बेदकर के प्रयासों को जाता है। उन्होंने सार्वजनिक स्थलों पर प्रवेश दिलाने के लिए सत्याग्रह भी किया। इस

सन्दर्भ में 'महद तालाब सत्याग्रह', रामगढ़ के 'गंगा सागर तालाब जलपान' सत्याग्रह, 'कालाराम मन्दिर प्रवेश' सत्याग्रह उल्लेखनीय हैं। डॉ0 अम्बेदकर ने ब्रिटिश राज के अन्तर्गत बनने वाले भारतीय प्रशासनिक अधिनियम, 1935 के अन्तर्गत मुसलमानों को प्राप्त साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के समान दलितों के लिए भी पृथक् प्रतिनिधित्व की मांग किया, किन्तु उन्होंने परिस्थितियों के दबाव के कारण महात्मा गांधी के साथ 1932 में 'पूना पैक्ट' के अन्तर्गत इस मांग को छोड़ दिया। उन्होंने दलितों की स्थिति को सुधारने के लिए कानूनी उपायों पर बल दिया। इसकी झलक अनेक संवैधानिक अनुच्छेदों एवं इसके आधार पर निर्मित होने वाली विभिन्न परवर्ती विधियों में दिखाई देती है।

डॉ0 अम्बेदकर ने ऐसे धार्मिक रीति–रिवाजों का भी विरोध किया जो मनुष्य–मनुष्य में भेद करता है। उनके अनुसार धर्म व्यक्ति के लिए है, व्यक्ति धर्म के लिए नहीं है। उन्होंने 'केन्द्रीय सभा' में 'मंदिर प्रवेश' से सम्बन्धित विधेयक पर बोलते हुए कहा था, 'धर्म', जो अपने को मानने वालों के बीच में पक्षपात करता है, धर्म नहीं है। किसी भी अनुचित बात को धर्म के अन्तर्गत नहीं लाया जा सकता। धर्म व दासता का कोई साथ नहीं है। उन्होंने समानता एवं सम्मानित जीवन की खोज में अपने लाखों अनुयाइयों के साथ बौद्ध धर्म को स्वीकार किया और अन्य अछूतों से भी ऐसा करने के लिए कहा था क्योंकि उनकी दृष्टि में हिन्दू धर्म समेत अन्य धर्मों में यह सम्भव नहीं था। उनका यह प्रयास कितना औचित्यपूर्ण था, यह विवाद का विषय है। यह भी उल्लेखनीय है कि बौद्ध भिक्षु डॉ0 अम्बेदकर द्वारा की गयी बौद्ध धर्म की व्याख्या से असहमत थे। जब डॉ0 अम्बेदकर की पुस्तक 'भगवान बुद्ध और उनका धर्म' प्रकाशित हुई तो बौद्ध भिक्षुओं ने उसे खतरनाक पुस्तक बताया एवं इसे घृणा और उग्रता का पोषक घोषित किया।

निष्कर्ष–के रूप में कह सकते हैं कि स्वातन्त्रयोत्तर भारत की सामाजिक राजनीतिक व्यवस्था के निर्माण में उनके विचारों की गम्भीर छाप पड़ी। उन्हें दलितों के मसीहा के रूप में जाना गया। उन्होंने दलितोद्धार के लिए वहीं कार्य किया जो अमेरिका में अब्राहम लिंकन ने दासों की मुक्ति के लिए एवं पॉल राबसन ने नीग्रो लोगों की मुक्ति के लिए किया।, इसलिए उन्हें भारत का लिंकन, मार्टिन लूथर, पॉल राबसन कहा गया। कुछ लोगों ने उन्हें 'बोधिसत्त्व' के रूप में भी देखा।

संदर्भ सूची :

1. राममूर्ति पाठक : सामाजिक दर्शन की रूपरेखा, अभिमन्यु प्रकाशन इलाहाबाद,2008
2. राजकिशोरः दलित राजनीति की समस्याएँ, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 2008
3. डॉ. धर्मवीर महाजन एवं डॉ.कमलेश महाजन, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, 2005

****